

भगवान दास मोरवाल के उपन्यासों में लोकचेतना के विविध स्वरूप

सुमन वर्मा,

हिन्दी विभाग,

नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

डॉ. विष्णु प्रसाद शुक्ल,

हिन्दी विभाग,

नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

सारांश

भगवान दास मोरवाल की रचनाओं में आंचलिकता का गहरा प्रभाव दिखाई पड़ता है। उनके उपन्यासों में मेवात अंचल के लोक के विविध स्वरूपों की सुगंध अनुभव की जा सकती है। भारत में इस्लाम के आगमन के बाद हुए सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों तथा उनके प्रभावों के साथ-साथ राजनीतिक और धार्मिक परिवर्तन, जनजातीय लोकचेतना, स्त्री के प्रति सामाजिक दृष्टि, जातिगत विद्वेष तथा लोकभाषा के जीवंत स्वरूप को भी उनके उपन्यासों में देखा जा सकता है। काला पहाड़, हलाला, रेत, खानजादा, वंचना, शंकुतिका, काँस और मोक्षवन आदि उपन्यासों में लोकचेतना के विविध स्वरूप अभिव्यक्त हुए हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में सामाजिक एवं सांस्कृतिक लोकचेतना, राजनीतिक चेतना, स्त्री-अस्मिता, जनजातीय जीवन, सामुदायिक सौहार्द तथा लोकभाषा के विभिन्न रूपों का अध्ययन किया गया है।

प्रमुख शब्द : भगवान दास मोरवाल, लोकचेतना, मेवात, लोकसंस्कृति, स्त्री-अस्मिता, राजनीतिक चेतना, जनजातीय जीवन, लोकभाषा।

प्रस्तावना

भगवान दास मोरवाल समकालीन हिन्दी कथा-साहित्य के ऐसे रचनाकार हैं जिनकी रचनाओं में अंचल और लोकजीवन का गहरा संबंध दिखाई देता है। उनकी रचनाओं में मेवात अंचल का सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन अपनी विशिष्टताओं के साथ उपस्थित हुआ है। मेव समुदाय के जीवन-संघर्ष, लोकगीत, रीति-रिवाज, लोकसंस्कृति तथा लोकभाषा के साथ-साथ समाज के उपेक्षित, शोषित, दलित, पिछड़े और जनजातीय समुदायों की स्थितियों को भी कथाकार ने संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है।

मोरवाल के कथा-साहित्य में लोकचेतना केवल परंपरा और लोकाचार तक सीमित नहीं है। सामाजिक

विषमता, जातिगत भेदभाव, स्त्री के प्रति पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण, राजनीतिक स्वार्थ तथा धार्मिक रूढ़ियों के विरुद्ध उठने वाले प्रतिरोध भी उनकी लोकचेतना का हिस्सा हैं। इसीलिए उनके उपन्यासों का लोकजीवन अपने भीतर परंपरा और परिवर्तन दोनों को समेटे हुए दिखाई देता है।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक लोकचेतना

भगवान दास मोरवाल के उपन्यासों में मेवात अंचल के आसपास के समाजों की स्पष्ट झलक मिलती है। मेव समुदाय के जीवन-संघर्ष, लोकगीत, रीति-रिवाज, संस्कृति और लोकभाषा के माध्यम से वहाँ के सामाजिक जीवन का यथार्थ सामने आता है। कथाकार समाज के उपेक्षित, शोषित, दलित, पिछड़े और जनजातीय समुदायों की स्थितियों को भी अपनी रचनाओं में स्थान देते हैं।

मेवात एक समृद्ध सांस्कृतिक क्षेत्र है। मेव मुस्लिम समुदाय की अपनी विशिष्ट सामाजिक पहचान है। मेव समुदाय के संबंध में यह कथन द्रष्टव्य है—

“मेव मुस्लिम समुदाय का एक जातीय समुदाय है, जिसे मेवाती भी कहा जाता है, जो हरियाणा के मेवात जिले और राजस्थान के अलवर और भरतपुर जिलों में रहता है।”¹

यहाँ मेवों की पहचान केवल धार्मिक आधार पर नहीं बल्कि उनके जातीय एवं अंचलीय संदर्भों से भी जुड़ी हुई दिखाई देती है।

हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक संबंध

काला पहाड़ में मेवात की साझा संस्कृति विशेष रूप से दिखाई देती है। मेव समुदाय के सामाजिक जीवन में हिन्दू संस्कृति की अनेक परंपराओं का प्रभाव दिखाई देता है। दोनों समुदायों के बीच लंबे समय से चले आ रहे सामाजिक संबंधों को उपन्यास का पात्र बुद्धन इस प्रकार व्यक्त करता है—

“सब सू बड़ी बात तो ई है के या इलाका में हिंदू और मेव एक कणबा की तरह रहता आया है।”²

यह कथन मेवात के सामाजिक जीवन में व्याप्त पारस्परिकता और आत्मीयता को स्पष्ट करता है। यहाँ धार्मिक पहचान अलग होने के बावजूद सामाजिक जीवन में दोनों समुदायों के बीच घनिष्ठ संबंध दिखाई देते हैं।

लोकसंस्कार और लोकगीत

मोरवाल ने लोकसंस्कृति को केवल विवरण के रूप में प्रस्तुत नहीं किया है, बल्कि उसे पात्रों के दैनिक जीवन का हिस्सा बनाया है। विवाह-संस्कारों में प्रचलित नेगचार, गीत-

संगीत और स्थानीय परंपराएँ इस सांस्कृतिक जीवन को जीवंत बनाती हैं।

काला पहाड़ में विवाह के अवसर पर गाया जाने वाला गीत है—

“बनड़ा ये बनड़ी को बड़ो चाव
चल दियो सिवर दोपहरी में
बनडा जूता लायो सई सांझ
मोजा लायो दुपहरी में ---।”³

इस प्रकार लोकगीत सामाजिक जीवन की सामूहिक स्मृति और सांस्कृतिक निरंतरता के वाहक बन जाते हैं।

ग्रामीण लोकजीवन और पंचायत व्यवस्था

मोरवाल के उपन्यासों में ग्रामीण समाज की अपनी न्याय-व्यवस्था और सामाजिक संरचना भी दिखाई देती है। काला पहाड़ में ग्रामीण समाज के लोगों का पंचायत व्यवस्था पर विश्वास दिखाई देता है। सलेमी का चरित्र सामाजिक निर्णयों के प्रति सम्मान और सामुदायिक व्यवस्था में विश्वास को व्यक्त करता है।

इस सामाजिक मानसिकता को उपन्यास के प्रसंग से समझा जा सकता है। ग्रामीण समाज अपनी अनेक घरेलू एवं सामाजिक समस्याओं का समाधान पंचायत के माध्यम से करता है। इससे स्पष्ट होता है कि लोकसमाज की अपनी सामाजिक संस्थाएँ होती हैं और उनका प्रभाव पात्रों के जीवन पर गहरा रहता है।

लोकचेतना और राजनीतिक चेतना

भगवान दास मोरवाल के उपन्यासों में राजनीति भी लोकजीवन का महत्वपूर्ण अंग बनकर सामने आती है। काला पहाड़ में विभाजन की त्रासदी और गाँधीवादी प्रभाव, बाबुल तेरा देश में पंचायती राजनीति, रेत में राजनीति के

दाँव-पेच, खानजादा में मध्यकालीन मुस्लिम सियासत तथा हलाला और काँस में पंचायत संबंधी प्रसंगों के माध्यम से राजनीतिक चेतना को अभिव्यक्ति मिली है।

काला पहाड़ में विभाजन की त्रासदी

काला पहाड़ में भारत-विभाजन का प्रभाव मेवात के सामाजिक जीवन पर दिखाई देता है। मेवों के पाकिस्तान जाने की स्थिति और गाँधीजी द्वारा उन्हें रोकने के प्रयास का उल्लेख उपन्यास में मिलता है—

“विभाजन के समय गाँधी ने बीच सड़क पर लेटकर पाकिस्तान जा रहे लोगों को रोक लिया था।”⁴

विभाजन की साम्प्रदायिक परिस्थितियों के बीच मेवात के सामाजिक संबंधों का चित्रण उपन्यास की राजनीतिक चेतना को महत्वपूर्ण बनाता है।

इसी उपन्यास में साम्प्रदायिक राजनीति की एक स्थिति इस प्रकार सामने आती है—

“अरे साफ-साफ कह क कि तेरी बला से चाहे हम मरे या जिँएँ ---ठीक है मत अइओ कल --
-अगर कलकत्ता को कोई ऐसी वैसी बात होगी और सरपंच कोई मेव बैठागो न तो फिर देख लीजौ ---हिंदुओं का सारा पाप तेरे सिर आएगों।”⁵

यह प्रसंग राजनीतिक स्वार्थ के लिए साम्प्रदायिक भावनाओं के इस्तेमाल की ओर संकेत करता है।

मेवात और ऐतिहासिक चेतना

मोरवाल के यहाँ वर्तमान राजनीतिक परिस्थितियों के साथ इतिहास की स्मृति भी जुड़ी हुई है। हसन खाँ मेवाती और

राणा सांगा का प्रसंग इस ऐतिहासिक चेतना का महत्वपूर्ण उदाहरण है—

“मेवात के इस शेर हसन खाँ मेवाती यह किया ऐतिहासिक जवाब जितना ताजा आज से लगभग चार सौ साल पहले था, आज भी उतना ही ताजा है। क्योंकि इधर राणा सांगा ने भी हसन खाँ को यह कहते हुए निमंत्रण भेजा था वह उस जाति की सहायता करे जिस जाति से वह पैदा हुआ है ---और हसन खाँ ने बाहर से आए दुश्मन का नहीं बल्कि अपनी गोत्री भाई का साथ दिया था।”⁶

यह प्रसंग मेवात के सामाजिक जीवन में जातीय एवं गोत्रीय संबंधों की ऐतिहासिक स्मृति को सामने लाता है।

रेत में जनजातीय लोकजीवन

रेत उपन्यास में घुमंतू कंजर जनजाति के जीवन-संघर्ष का चित्रण मिलता है। साथ ही उपन्यास भारतीय राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न स्तरों को भी सामने लाता है। पंचायत की राजनीति से लेकर संसद की राजनीति तक के विविध पक्षों का चित्रण इसकी विशेषता है।⁷

कंजर समाज की सामाजिक व्यवस्था में ‘मथ्था ढकाई’ जैसी परंपराओं का उल्लेख मिलता है। कमला बुआ वैद्य से कहती हैं—

“वैद्य जी हमारे यहाँ जो इज्जतदार मथ्था ढकाई करता है, उमरभर उसका जमाई की तरह मान किया जाता है। एक ब्याहता मर्द की तरह अपनी खिलावड़ी के पास आने-जाने की पूरी छूट होती है, उससे कभी पैसे नहीं लिए जाते हैं बल्कि जमाई की तरह पूरे नेग दस्तूर के साथ उसकी विदाई दी जाती है। वैसे भी वैद्य जी मथ्था ढकाई

जिंदगी में एक दफे ही होता है। ये समझ लो इस बहाने जमाई के चाव-चोचले पूरे हो जाते हैं।”⁷

यह प्रसंग कंजर समाज की विशिष्ट सामाजिक संरचना और स्त्री की स्थिति दोनों को सामने लाता है।

रेत में स्त्री और राजनीतिक सत्ता

रेत में रुक्मणी का चरित्र सामाजिक परिस्थितियों से निकलकर राजनीतिक सत्ता तक पहुँचने वाली स्त्री के रूप में सामने आता है। उसके संबंध में कहा गया है—

“जिस देह, दम और दामन के सहारे वह अपना जीवन चलाती है, उसी दम और दामन के सहारे वह अपने राजनीतिक शीर्ष तक पहुँचती है। राजनीति में वह किसी के हाथ रखल बनकर नहीं रहती है। यहाँ वह अपने निर्णय और अपनी राजनीतिक दूरियों की यात्रा स्वयं तय करती है।”⁸

रुक्मणी का चरित्र स्त्री के सामाजिक जीवन और राजनीतिक सत्ता के बीच संबंध को सामने लाता है। वह राजनीतिक क्षेत्र में स्वयं निर्णय लेने वाली स्त्री के रूप में प्रस्तुत होती है।

बाबल तेरा देश में सामुदायिक लोकचेतना

बाबल तेरा देश में मेवात की साझा सामाजिक संस्कृति और हिन्दू-मुस्लिम सहयोग को प्रमुखता मिली है। मोहर्रम के अवसर पर आयोजित पट्टेबाजी को देखने के लिए हिन्दू और मुस्लिम दोनों समुदायों के लोग उपस्थित होते हैं। यह आयोजन धार्मिक उत्सव से आगे बढ़कर सामाजिक मेल-जोल का रूप ग्रहण करता है।

नसीब खाँ की पट्टेबाजी के संबंध में कहा गया है—

“नसीब खाँ जैसे पट्टेबाज आसपास के पाँच-सात गाँव में नहीं हैं। लोगों को इंतजार रहता है कि कब ताजिए आए और कब उन्हें इस पट्टेबाजी की चपलता और कौशल देखने को मिले।”⁹

मेवात के सामाजिक जीवन में संकट की परिस्थितियों में हिन्दू-मुस्लिम सहयोग की भावना भी दिखाई देती है। बंतो की बेटियों के विवाह से संबंधित समस्या के समाधान में जैतूनी की भूमिका इसी सामाजिक सहयोग को व्यक्त करती है।

स्त्री-अस्मिता और पितृसत्ता

भगवान दास मोरवाल की लोकचेतना में स्त्री-अस्मिता का प्रश्न महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उनके उपन्यासों में स्त्री के जीवन को प्रभावित करने वाली सामाजिक रूढ़ियों, पितृसत्तात्मक व्यवस्था और धार्मिक-सामाजिक मान्यताओं का चित्रण मिलता है।

शंकुतिका में बेटियों के प्रति बदलती दृष्टि

शंकुतिका में बेटियों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन का संकेत मिलता है। दशरथ के परिवार में गोद ली गई बेटि के आगमन पर पुत्र के जन्म की तरह कुआँ पूजने की परंपरा अपनाई जाती है—

“क्यों, यह खबर नहीं है कि जहाँ सिर्फ लड़का पैदा होने पर कुआँ पुजता है, दशरथ के परिवार ने लड़की की खुशी में कुआँ पुजवाया है वह भी एक गोद ली हुई लड़की का।”¹⁰

यह प्रसंग पुत्र और पुत्री के बीच सामाजिक भेदभाव को चुनौती देने वाली चेतना को व्यक्त करता है।

हलाला में स्त्री-चेतना

हलाला में स्त्री के जीवन पर पुरुष सत्ता और धार्मिक-सामाजिक रूढ़ियों के प्रभाव का चित्रण किया गया है। तलाक और हलाला की प्रक्रिया के बीच स्त्री की स्थिति अत्यंत पीड़ादायक बन जाती है। उपन्यास में स्त्री की विवशता इस कथन में व्यक्त हुई है—

“बस, मेरो एक काम कर दे ---अपणा इन हाथन सो मेरो गला घोट दे”¹¹

स्त्री की यह स्थिति उस सामाजिक व्यवस्था की ओर संकेत करती है जिसमें उसके जीवन का निर्णय दूसरे लोग लेते हैं।

पुरुषवादी मानसिकता को लोककथन के माध्यम से भी व्यक्त किया गया है—

“तिरिया और तुमड़ी, सब बिष की सी बेल।

बैरी मारे दाव सू, तिरिया मारे हँस खेल।”¹²

इस प्रकार उपन्यास में स्त्री के संबंध में प्रचलित पुरुषवादी धारणाओं को सामने लाकर उनके भीतर छिपे सामाजिक पूर्वाग्रहों को रेखांकित किया गया है।

मोक्षवन में विधवा जीवन की त्रासदी

मोक्षवन में विधवा स्त्रियों के जीवन की पीड़ा और सामाजिक उपेक्षा को प्रमुखता से प्रस्तुत किया गया है। वृंदावन की विधवाओं के जीवन के माध्यम से उस सामाजिक व्यवस्था का चित्रण हुआ है जिसमें पति की मृत्यु के बाद स्त्री को परिवार और समाज से अलग कर दिया जाता है।

एक विधवा स्त्री अपने जीवन की त्रासदी बताते हुए कहती है—

“हमारे नेपाल में जो औरत बचपन में विधवा हो जाती है उसे कहते हैं दीदी। मेरी चौदह बरस की

उम्र में शादी हुई थी। मेरी पति की उम्र बीस साल की थी। तीन साल बाद मैं जब पेट से थी तो मेरे पति की मौत हो गई। उनकी मौत के बाद मैं जब पेट से आठ महीने की थी तब मेरा बच्चा गिर गया था। उसके बाद तो मेरे ऊपर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा।”¹³

वह आगे अपने साथ हुए सामाजिक व्यवहार का वर्णन करती है—

“मेरे ससुराल वालों ने मुझे उसी दिन घर से बाहर निकाल दिया। माँ-बाप के घर आयी तो समाज वालों ने मेरे घर वालों को कहकर पहले मेरा सिर मुड़वाया और उसके बाद सफेद धोती पहनने के लिए कहकर यह कहा कि मुझे नंगे पांव रहना पड़ेगा। मांस-मछली सब खाना छुड़वा दिया।”¹⁴

यह प्रसंग स्त्री के वैधव्य को व्यक्तिगत दुःख से आगे बढ़ाकर सामाजिक समस्या के रूप में स्थापित करता है।

लोकभाषा की चेतना

मोरवाल के उपन्यासों में लोकभाषा का प्रयोग पात्रों और अंचल की पहचान को स्थापित करता है। मेवाती बोली, ग्रामीण उच्चारण, स्थानीय मुहावरे और लोकप्रयोग उनके कथा-साहित्य को स्वाभाविकता प्रदान करते हैं।

लोकभाषा के माध्यम से पात्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि और मानसिकता पाठक के सामने सहज रूप में आती है। इस प्रकार भाषा स्वयं लोकचेतना की अभिव्यक्ति बन जाती है।

निष्कर्ष

भगवान दास मोरवाल के उपन्यासों में लोकचेतना का स्वरूप अत्यंत व्यापक है। उनके यहाँ लोकजीवन केवल रीति-रिवाज, लोकगीत और परंपराओं का चित्रण नहीं है,

बल्कि सामाजिक संबंधों, राजनीतिक परिस्थितियों, जातिगत संरचना, स्त्री-अस्मिता, जनजातीय जीवन और सामुदायिक संबंधों का समग्र संसार है।

काला पहाड़ में मेवात की साझा संस्कृति, हिन्दू-मुस्लिम संबंध, लोकगीत, विवाह-संस्कार तथा विभाजन की त्रासदी के माध्यम से लोकचेतना का सामाजिक और राजनीतिक रूप सामने आता है। रेत में कंजर जनजाति का जीवन, उसकी सामाजिक व्यवस्था तथा राजनीतिक सत्ता से संबंध दिखाई देता है। बाबुल तेरा देश में सामुदायिक सहयोग तथा पंचायती जीवन की झलक मिलती है। शंकुतिका में बेटियों के प्रति बदलती सामाजिक दृष्टि, हलाला में स्त्री की पीड़ा तथा मोक्षवन में विधवा जीवन की त्रासदी को अभिव्यक्ति मिली है।

इस प्रकार मोरवाल के उपन्यासों में लोकचेतना परंपरा और परिवर्तन दोनों से निर्मित होती है। वे लोकसंस्कृति की विशेषताओं को सामने रखते हुए उसी लोकसमाज के भीतर मौजूद रूढ़ियों, असमानताओं और विसंगतियों को भी रेखांकित करते हैं। उनकी रचनाओं में लोकभाषा, लोकगीत, सामाजिक संबंध, सामुदायिक सौहार्द, स्त्री-प्रतिरोध और राजनीतिक चेतना परस्पर जुड़े हुए हैं। यही उनके उपन्यासों की लोकचेतना को बहुआयामी बनाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- मेवाती संस्कृति, सिद्दीक अहमद मेव, काव्या पब्लिकेशन, दिल्ली, 2025, पृ.138
- काला पहाड़, भगवान दास मोरवाल, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृ.16
- काला पहाड़, भगवान दास मोरवाल, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृ.124
- काला पहाड़, भगवान दास मोरवाल, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृ.443
- काला पहाड़, भगवान दास मोरवाल, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृ.386.
- काला पहाड़, भगवान दास मोरवाल, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2017, पृ.89-90
- रेत, भगवान दास मोरवाल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2016, पृ.144
- रेत, एक अनुशीलन के विविध आयाम, सं. डाॅ लोकेश कुमार गुप्ता, श्री नटराज प्रकाशन नई दिल्ली, 2018, पृ.154
- बाबुल तेरा देश में, भगवान दास मोरवाल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2004, पृ.162
- शंकुतिका, भगवानदास मोरवाल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2020, पृ.172
- हलाला, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2015, पृ.153
- हलाला, भगवानदास मोरवाल, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2015, पृ.36
- मोक्षवन, भगवानदास मोरवाल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2023, पृ.154
- मोक्षवन, भगवानदास मोरवाल, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2023, पृ.155